Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2021: 7.278, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, AUG-SEPT, 2021, VOL-9/47

पारितंत्र - अध्यात्म समाज कार्य प्रारूप के आयाम की गांधी दृष्टि

मिथिलेश कुमार[1], Ph. D. & छविनाथ यादव[2]

[1]*Mkt1980@gmail.com*

[2]*Chhabinathyadav1987@gmail.com*

Paper Received On: 25 SEPT 2021

Peer Reviewed On: 30 SEPT 2021

Published On: 1 OCT 2021

Abstract

भारतीय संस्कृति में अध्यात्म अहम स्थान रखता है। यह धर्म, मूल्य, योग एवं नियम के रूप में भारतीय समाज के विविध जीवन पक्षों में अनुस्यूत हुआ है। इसने प्रकृति एवं मानव समाज के बीच संतुलन कायम किया है। प्रकृति के संरक्षण एवं संवर्द्धन को लेकर भारतीय आध्यात्मिकता को तब और बल मिला जब पूरे पृथ्वी का पारितंत्र बिगड़ गया और अनेक प्रकार के पर्यावरणीय समस्याएँ जन्म लेने लगी। इन समस्याओं का वैज्ञानिक हल खोजने का प्रयास वैश्विक स्तर पर किया गया और जारी है। अंततः इस सत्य के तरफ विद्वानों का ध्यान गया कि पारितंत्र असंतुलन के समस्या का कारण मानव मन में है। मानव का वह मन जो पहले अपने आप-पास के जीव-जंतु, पेड़-पौधे, मैदान एवं पहाड़ के प्रति भावनात्मक रूप से जुड़ा तथा आहलादित होता था आज पूरी तरह से उसके प्रति वयावसायिक हो चुका है। प्रकृति के प्रति मानव के आध्यात्मिक मूल्य सर चुके है। समग्र अस्तित्व की अवधारणा खत्म हो गई है। आवश्यकता है कि वैदिक दर्शन के प्रकृतिवादी पक्ष का पुनर विश्लेषण करके सह अस्तित्व के भावना का उत्थान एवं विकास किया जाए। संपोषणीय विकास की अवधारणा को देखा जाए तो इससे संबंधित गांधी के विचार भी प्रासंगिक होते हैं जो सह अस्तित्व के भावना के पक्षधर थे। भारतीय धर्मशास्त्रों का मूल मानी जानेवाली श्रीमद भागवदगीता संपूर्ण प्रकृति का एक ही ब्रम्हा का विवर्त रूप मानती है जो इस दर्शन को प्रदान करती है कि प्रत्येक जीव इस ब्रम्हाण्ड की एक इकाई मात्र है। अतः इस ब्रम्हाण्ड की सत्ता के लिए सभी इकाईयों की सत्ता आवश्यक है। ऐसे में प्रकृति के प्रति अतिरेक एवं भोक्तावादी भावना व्यक्ति, समाज एवं प्रकृति तीनों के खुशहाली के लिए हानिकारक है।

प्रमुख बिंदु- *पारितंत्र, पारितंत्र-मनोविज्ञान, पारितंत्र -आध्यात्म,पारितंत्र-मनोवैज्ञानिक असंतुलन,पारितंत्र विकास, पारितंत्र-अध्यात्म की गांधी दृष्टि, संपोषणीय विकास*

Scholarly Research Journal's** is licensed Based on a work at **www.srjis.com

पारितंत्र -आध्यात्म के विकास का वयावहारिक पक्ष

सर्वप्रथम पारितंत्र मनोविज्ञान की अवधारणा का प्रतिपादन कैलिफोर्निया के प्रोफेसर थियोडोर रोजैक ने 1969 ई. में. अपनी पुस्तक ‘द वायस ऑफ अर्थ’ में किया। इस संकल्पना के अंतर्गत माना जाता

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

है कि प्रकृति मनुष्य के लिए माता के समान है जिसके साथ व्यक्ति की भावना का विकास पुत्र जैसा होता है। इस प्रक्रिया में मनुष्य या मानव समाज के विकास के साथ उसका भावनात्मक विकास भी प्रकृति के सापक्ष हो जाता है। भारत प्राकृतिक रूप से संपन्न देश रहा है। इसीलिए यहाँ अहिंसा मूलक धर्म एवं संस्कृति विकसित हुई। प्रकृति की हर एक वस्तु को दैवत्व एवं पूर्ण चेतना का रूप दे दिया गया। प्रकृति एवं संस्कृति का साझा अस्तित्व मानवीय भावनाओं के विकास अनुक्रम में आगे बढ़ा। "सुरक्षित जीवन, प्राकृतिक संसाधनों की संपन्नता, चिंता से मुक्ति,जीवन की जिम्मेदारियों से विरक्ति और क्रूर व्यावहारिक स्वार्थ के अभाव ने ही भारत के उच्चतर जीवन को प्रोत्साहन प्रदान किया जिसके परिणाम स्वरूप हमें इतिहास के आरंभ काल से ही भारतीय मन में आत्मज्ञान के लिए एक प्रकार की विकलता, विद्या के प्रति प्रेम और मस्तिष्क के अधिक स्वास्थ्य और युक्ति युक्त प्रवृत्तियों के प्रति लालसा दिखाई देती है।" (राधाकृषणन ; 2017, पृ. 18)।

ऋषि मुनियों, संतों एवं कवियों का ज्ञान दर्शन एवं वाणी ने भारतीय मानस के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक पक्ष को एकात्मभाव प्रदान कर दिया। उसी ऋषि एवं मनीषी परंपरा के मोहनदास करमचंद्र गांधी संवाहक थे । गांधी भारतीय संस्कृति एवं परंपरा के पुरजोर समर्थन ही नहीं करते हैं बल्कि पूरी आत्मनिष्ठा के साथ जीते भी हैं। उनके शब्दों में ''भारत ने ही जीवन के गंभीर समस्या पर विचार किया है और उसके हल खोजा है। न केवल इस जन्म के लिए बल्कि तमाम जन्मों के लिए रूपांतरित व सनातन जीवन बनाने के लिए नितान्त आवश्यक है तो भी में भारत की ही ओर संकेत करूँगा (वा. खंड-1, पृ. 182)।

गांधी स्वीकारते हैं कि भारतीय समाज का पारितंत्र-मनोवैज्ञानिक विकास अद्वैतवादी पारितंत्र-अध्यात्म के स्वरूप का पर्याय है। स्पष्ट रूप में देखा जाए तो 'पारितंत्र का विचार हिंदु दर्शन में गांधी के रूप में अखण्ड एवं व्यापक स्वरूप को प्राप्त कर लिया, मुख्य रूप में उनका अहिंसा के प्रति झुकाव सभी प्रकार के जीवन को सम्मान प्रदान करता था, साथ-साथ पर्यावरण के साथ सादगी पूर्ण जीवन व्यतीत करने को प्रोत्साहित करता है (पेडरसन : 1998: पृ.274)। गांधी का पारितंत्र-आध्यात्म प्रकृति के प्रति वापस जाओं पर आधारित था। वे प्रकृति के संपूर्ण जीवों एवं पदार्थों में एक ही परमात्मा का दर्शन करते हैं। गांधी का पारितंत्र मनोविज्ञान गीता के दर्शन से प्रभावित था। गांधी विचार गीता के दशवें अध्याय के बीसवें श्लोक से पुष्ट होता है कि 'हे अर्जुन : मैं समस्त जीवों के हृदयों में स्थित परमात्मा हूँ। मैं ही समस्त जीवों का आदि, मध्य तथा अंत हूँ (अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितिः। अहमादिश्च मध्यं च भूतानामंत एवं च।।)

भारतीय दर्शन का मुख्य पक्ष 'जीवों एवं जीने दो' पर खड़ा है। यह सह-अस्तित्व के विचार का समर्थन है। गांधी सह-अस्तित्व के विचार को व्यक्ति, जीव-जंतु, वनस्पति एवं भौतिक पदार्थों के संरक्षण एवं

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

संवर्द्धन तक स्वीकारते हैं। मानव-प्रकृति का परस्पर संबंध ही मानव-प्रकृति के विकास का मौलिक सिद्धांत रहा के मनोविज्ञान को दुनिया के अनेक देशों एवं दर्शनों में जगह मिला है, भले ही उसका शाब्दिक ढ़ाचा भिन्नता पूर्ण रहा हो। सह-अस्तित्व की संकल्पना को जापान में 'क्योसेई', चीन में 'जियाकंग', दक्षिण अफ्रीका में 'अबन्टु', एवं भारतीय दर्शन में 'वसुधैव कुटुंबकम' कहा गया है (स्कोलीमोवस्की : 1990, पृ.98)।

गांधी के पारितंत्र -=आध्यात्म से संबंधित विचार चार आयामी दिखता है। ये चार आयाम पारितंत्र, मानव, मानवीय मनोविज्ञान एवं अध्यात्म है। किसी भी देश अथवा समाज के पारितंत्र-आध्यात्म के ये चार प्रमुख तत्व आवश्यक हैं। इनमें संतुलन का होना पारितंत्र -आध्यात्म के संतुलन को इंगित करता है। इनमें खास बात यह है कि अध्यात्म का आयाम शेष तीनों आयामों पारितंत्र, मानव एवं मनोविज्ञान से अधिक विशद् एवं सार्वभौमिक है।

पारितंत्र -आध्यात्म असंतुलन

पारितंत्र के प्रति विश्व मानव समाज की भावना निरंतर विचलन के तरफ बढ़ रही है। प्रकृति एवं व्यक्ति के बीच माता एवं पिता का संबंध आज सेवक एवं स्वामी का बन गया है। प्रकृति के प्रति यह निर्दयता मनुष्य के ही नाश का कारण बन रही है। गांधी प्रकृति के प्रति इस निर्दयता के पीछे तकनीकी एवं आधुनिक सभ्यता के पागलपन को कारण मानते हैं। 'आज मनुष्य पूरी तरह तकनीकी का दास बन गया है। दासता मनुष्य के मनुष्यता को खत्म कर दी है जिसके कारण मानव की सृजनशीलता एवं अध्यात्मिक उन्नति अवरूद्ध हो गई है (पॉल : 1990, पृ.16-33)। विकास का तात्पर्य वस्तुओं एवं उपभोग की ज्यादाती नही है। यही सोच ने प्रकृति के प्रति मनुष्य के व्यवहार को आसुरी बना दिया है। गांधी पर्यावरण के प्रति समाज के विचलित भाव के लिए राजनीति को जिम्मेदार मानते हैं 'राजनीति से धर्म को पृथक करके राज्य किस प्रकार नैतिकतापूर्ण एवं संतुलित निर्णय ले सकता है; सत्य के प्रति मेरी भक्ति ने मुझे राजनीति के क्षेत्र में ला खड़ा किया है और मैं बिना किसी हिचक के किंतु परम विनम्रता के साथ कहना चाहता हूँ कि जो लोग यह कहते है कि धर्म की राजनीति से कोई वास्ता नहीं है, वे धर्म का अर्थ नहीं जानते' (आत्मकथा, पृ; 320-371) ।

युद्ध का मनोविज्ञान प्राकृतिक पारितंत्र एवं सामाजिक पारितंत्र के लिए बड़ा खतरा है। इस खतरे के पीछे आसूरी सभ्यता खड़ी है जो पूरी दुनिया के मानसिकता को प्रकृति विरोधी बना दिया है। युद्ध का विज्ञान विशुद्ध तानाशाही की ओर जब कि अहिंसा का विज्ञान शुद्ध लोकतंत्र के तरफ ले जाता है। (हरिजन, 15 अक्टूबर, 1936; पृ. 290)।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

पारितंत्र संपोषणीय विकास एवं सर्वोदय

गांधी जॉन रस्किन के पुस्तक 'अनटु दिस लॉस्ट' से अत्याधिक प्रभावित थे। जिसका उन्होंने 'सर्वोदय' के नाम से अनुवाद किया था। गांधी सर्वोदय का अर्थ किसी खास जाति, धर्म, समुदाय का विकास न होकर संपूर्ण मानवता एवं उसके जीवन से जुड़े चराचर जगता का विकास मानते है। गांधी सिर्फ आर्थिक रूप से अंतिम व्यक्ति के विकास को सर्वोदय नहीं कहते थे बल्कि सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक रूप से विकास को असली सर्वोदय स्वीकारते थे। गांधी के सर्वोदय में जातिय भेदभाव, धार्मिक वैमनस्यता एवं हिंसा का कोई स्थान नही है। अहिंसा, प्रेम एवं सह अस्तित्व गांधी के पारितंत्र दर्शन (इकोसोफी) का मूल केंद्र रहा है। सबसे प्रेम एवं अहिंसा पूर्ण व्यवहार करना ही मनुष्य का कर्तव्य एवं सर्वोदय का आधार है। अपने शत्रुओं से प्रेम करने, कोट की जरूरत पर अपना चोगा दे देने, बाए गाल पर तमाचा मारने पर दाहिना गाल सामने कर देने कि शिक्षा जिस विभूति ने दी, जिसने यहूदी और गैर-यहूदी के भेद को उखाड़ फेका वह ऐसी वृत्ति को कैसे बरदाश्त करेगा, जो आदमी को इतना अहंकारी बनाती है कि वह अपने सहजीव के स्पर्श से भी अपने-आपको नापाक हुआ माने (गां. वा. खंड-1, पृ. 168)। पारितंत्र के अंतर्गत प्राकृतिक सामाजिक, राजनैतिक एवं आध्यात्मिक सभी पक्षों का समावेश होता है।

गांधी की शाकाहार दृष्टि एवं पारितंत्र

अहिंसा की गांधीवादी दृष्टि जो शाकाहार एवं सुकर्म से जुड़ी हुई है। यह पूरी तरह संपूर्ण जीवों को आध्यात्मिक दृष्टि से जुड़ी हुई मानती है, सभी जीवों में दिव्यता का दर्शन करती है। प्रत्येक व्यक्ति इस भाव का अनुभव करते है कि 'जीवंत पृथ्वी का अधिकार है कि वहाँ जीवन कायम रहे, और यह अधिकार प्राथमिक रूप से संपोषणीय विकास का तर्क प्रदान करता है (कोठारी :1990, पृ. 32) जगत के जीवित एवं आजीवित वस्तुओं में एक ही परमात्मा का दर्शन करना अथवा खुद के आत्मा का विवर्तरूप स्वीकारना अध्यात्म के तरफ मनोवैज्ञानिक रूप में बढ़ना है। योग बाह्य पदार्थों (सम्भूति) में एक ही सूक्ष्म आत्म (असम्भूति) का दर्शन प्रदान करता है। जो लोग खुद को योग के द्वारा साधते हैं वे सभी में खुद की आत्मा का दर्शन करते हैं, सर्वत्र वे समान तत्व का दर्शन करते हैं (गांधी : 1926, पृ.23, सिंह : 2013, पृ. 243)। प्रकृति के प्रति सोच में बदलाव से अपने जीवन में भी बदलाव होता है। 'जब हम पृथ्वी की देखरेख करते हैं तो हम खुद ही अपनी देख रेख करते हैं (रोस्टन : 1983 पृ. 181) । गांधी का पारितंत्र- मनोविज्ञान प्रकृति के आध्यात्मिक रूप में विश्वास करता है तो प्रकृति के विध्वंस से बचने एवं उसके संवर्द्धन के लिए आध्यात्म एवं धर्म महत्वपूर्ण स्थान देता है। हमारे अस्तित्व के संघर्ष की यात्रा यदि धार्मिक रही है तो इलाज भी धार्मिक तरीके से संभव होगा। जबकि हमने इसे हाँ या नहीं तक सीमित कर दिया है। आवश्यकता हमें पुन: विचार करने की है कि किस प्रकार हम अपने प्रकृति एवं भाग्य का अनुसंक्षण कर सकते हैं (व्हाइट : 1967,

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

पृ.1207)। गांधी मांसाहार को इसलिए भी निषिद्ध मानते थे कि इसका प्रभाव शारीरिक स्तर के साथ-साथ वैचारिक एवं भावनात्मक स्तर पर भी पड़ता है।

गांधी का पारितंत्र अध्यात्म एवं स्वविकास

गांधी के विचार व्यक्ति एवं समष्टि के मध्य अंतर को खत्म करते हुए व्यक्ति में समष्टि एवं समष्टि में व्यक्ति के चेतना को बढ़ाने वाले थे। गांधी के संपूर्ण तत्व दर्शन जैसे अहिंसा, सत्य, शाकाहार या सुकर्म अखिल विश्व को एक वृहद पारितंत्र स्वीकारते हुए उसमें दिव्य जीवन या विश्वात्मा के भाव को प्रक्षेपित करते हैं। गांधी के दृष्टि में विश्व पारितंत्र की सभी घटनाएं चाहे जैविक हो या अजैविक अपने आप में समान महत्व रखती हैं और सभी घटनाएं विश्व पारितंत्र के विकास एवं संचालन में अहम भूमिका निभाती हैं। इसलिए किसी व्यक्ति को ब्रम्हाण्ड के किसी भी चीज को अचेतन एवं तुक्ष्य समझकर उसके साथ बुरा या हिंसा पूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए। गांधी कहते है कि ‘‘जो कोई भी अहिंसा में विश्वास करता है वह ऐसा व्यवसाय चुनता है जिसमें कम से कम हिंसा होने की संभावना हो (सिंह :2007, पृ. 136)। गांधी के दृष्टि में जो व्यक्ति अहिंसा का व्यवहार करता है वही सच्चे अर्थ में मनुष्य बनने की शर्त को पूरा करता है। गांधी एक प्रयोग धर्मी व्यक्ति थे उन्होंने अहिंसा की संकल्पना को अपने जीवन में पूरी तरह उतारा। उनकी अहिंसा की अवधारणा जैन धर्म, भारतीय भौगिक पद्धति एवं ईसाइ धर्म से प्रभावित थी। अहिंसा ईश्वर या परम आनंद तक पहुँचने का साधन है जिसे आध्यात्मिक अनुशासन एवं उन्नति के द्वारा ही पाया जा सकता है। भौतिक एवं सामाजिक दोनों पारितंत्र के विकास एवं अनुरंक्षण के लिए अहिंसा परमशस्त्र है। गांधी सामाजिक व्यवस्था को धर्म से संचालित करने की बात करते थे। उनकी दृष्टि में धर्म का अर्थ या सुकर्म यानि सच्चा कर्म ही समाज में असली खुशहाली ला सकता है। यह सच्चा कर्म समाज का हर व्यक्ति तब करेगा, जब वह सत्य अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह एवं ब्रम्हचर्य का पालन करेगा। इस तरह से गांधी अपने पारितंत्र अध्यात्मकी अवधारणा में ‘आत्म-साक्षात्कार’ आचरण की शुद्धता, आध्यात्मिक जीवन के प्रति निष्ठा तथा सामाजिक व्यवस्था पर जोर देते हैं (हैंग :2006, पृ. 47). गांधी की अध्यात्मिक दृष्टि पारितंत्र के परिप्रेक्ष में वैज्ञानिक थी। भौतिक वस्तुओं के प्रति लालच भावना को कम करके ही संपोषणीय विकास को एक तरफ पाया जा सकता है तो दूसरी तरफ आत्म साक्षात्कार किया जा सकता है।

गांधी मानवीय मूल्यों को आत्म साक्षात्कार में अहम स्थान देते हैं। ये मानवीय मूल्य व्यक्ति जीवन के केंद्र होते हैं। इनका विकास पारितंत्र, समाज, अर्थव्यवस्था एवं अध्यात्म के आपसी अंतक्रिया के प्रतिफल स्वरूप होता है। गांधी ने कहा कि ‘‘मैं कतई विश्वास नही कर सकता कि व्यक्ति बाह्य चीजों से परेशान रहते हुए अध्यात्म की ऊँचाईयों को प्राप्त कर सके। मैं अद्वैत में विश्वास करता हूँ, मैं मनुष्य की आवश्यकता एकता में विश्वास करता हूँ और यह चीज सभी पदार्थों एवं जीवों के जीवन में लागू होती है।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

इसलिए मैं विश्वास करता हूँ कि यदि एक व्यक्ति अध्यात्म को प्राप्त करता है तो वह पूरा संसार को प्राप्त करता है और यदि एक व्यक्ति इसमें असफल होता है तो पूरे संसार के संदर्भ में असफल होता है (यंग इंडिया, 4.12.1924 : 398)। ऐसे में व्यक्ति के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह आत्म-साक्षात्कार के लिए आध्यात्मिक जीवन जीते हुए अर्थव्यवस्था, समाज एवं पारितंत्र में संतुलन बनाए।

पारितंत्र आध्यात्म संतुलन एवं स्वदेशी

गांधी पाश्चात्य सभ्यता का विरोध एवं स्वदेशी का समर्थन करते हैं। उनकी दृष्टि स्वदेशी को लेकर पूरी तरह व्यापक थी। मात्र राजनैतिक आजादी का रूप स्वदेशी वे नहीं मानते थे। उनके दृष्टि में राष्ट्र एवं समाज का आर्थिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, शैक्षिक एवं स्वास्थ्य से संबंधित पक्ष भी स्वदेशी होना चाहिए। जो इस बात का परिचायक है कि विशिष्ट पारितंत्र की संभावना मनुष्य को जो प्राप्त हुई है उसके मर्यादाओं को वगैर तोड़े अपना विकास करना चाहिए। गांधी स्वदेशी को ''कानूनों का कानून कहते है'' (नवजीवन:2007, पृ.35)। यह सार्वभौमिक नियम है जो अपने आप सहज रूप में कार्य करता है। इस नियम के द्वारा प्रकृति एवं पारितंत्र का वास्तविक रूप संरक्षित होता है। गांधी स्वदेशी को प्रकृति जनित अध्यात्मिकता बताते है जो मानवीय चेतना की शुद्धि एवं विकास का आधार है। वे स्वदेशी को श्रीमद् भागवद गीता के दृष्टि से भी जायज ठहराते हुए कहते है कि ''यही उचित है कि अपने धर्म का पालन करते हुए मरे। दुसरे के धर्म का अनुसरण करना खतरे से भरा हुआ है।''(नवजीवन :2007, पृ. 36)। स्वदेशी का पालन करने वाला सच्चा व्यक्ति होता है जो जीवन के आंतरिक एवं बाह्य दोनों पारितंत्र का संतुलन कायम करने में सक्षम बन पाता है। गांधी स्वदेशी को परिभाषित करते हुए कहते है कि ''हमारी आत्मा सदैव हमें अपने तात्कालिक भोग करने की प्रकृति को दूरस्थ संसाधनों के प्रयोग के संदर्भ में रोकती है'' (प्रभु & रॉय ; 1996, पृ. 4-10)।

गांधी बड़े पैमाने पर बढ़ रहे औद्योगिकरण का विरोध किया। उनका मानना था कि यह औद्योगिक व्यवस्था प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों प्रकार के शोषण को बढ़ावा देती है। वे वृहद उद्योगों के जगह लघु कुटिर उद्योगों के हिमायती थे। कुटिर उद्योग असली मायने में संपोषणीय विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। इसलिए गांधी स्थानीय उत्पादन, उपभोग एवं वियोजन को प्रोत्साहन देते थे। आर्थिक असमानता के बारे में गांधी का दृष्टिकोण मध्यममार्गी था। वे मानते थे कि समान आर्थिक वितरण आर्थिक आजादी नहीं है। बल्कि हर व्यक्ति को पर्याप्त भोजन, कपड़ा एवं मकान की व्यवस्था होनी चाहिए। आर्थिक असमानता को समान करने में गांधी अहिंसा को प्रमुख माध्यम मानते हैं। गांधी का विचार था कि यूरोपीय सभ्यता के साम्राज्यवादी दानवीय चंगुल से यदि विश्व को बचना है तो स्वदेशी ही एक मात्र रास्ता है। गांधी शिक्षा के संदर्भ में भी स्वेदशी का पालन करने की बात करते थे। उनके दृष्टि में शिक्षा का उद्देश्य एवं प्रकृति खुद के

मिट्टी से उपजी संस्कृति एवं संभावना के अनुसार होना चाहिए। शिक्षा ऐसी हो कि व्यक्ति अपने प्राकृतिक एवं सामाजिक दोनों प्रकार के पारितंत्र से समन्वय बैठा सके। ''शिक्षा प्रेम का भाव विकसित करे। जहाँ प्रेम है वही जीवन है, घृणा तो विध्वंश को जन्म देती है'' (यंग इंडिया, 5 मई, 1920)।

पारितंत्र मनोविज्ञान असंतुलन एवं गांधीवादी समाधान प्रारूप

दुनिया में वैश्विक तापन, निर्वनीकरण, सूखा भूस्खलन, एवं जलप्रदूषण मानवीय मस्तिष्क के प्रदूषण का ही प्रतिफल है। यह मानव के पारितंत्र के प्रति विचलित भावना एवं व्यवहार का परिणाम है। बेतहाशा मानवीय लोभ प्रकृति के प्रति बढ़ने के कारण पृथ्वी की विविधता खत्म होती जा रही है। इस संदर्भ में गांधी ने पूरी आस्था के साथ मानवीय नैतिक आचरण को श्रेष्ठ माना एवं विश्वास जताया कि पारितंत्र संकट का निदान मानवीय नैतिक मूल्यों के विकास के द्वारा ही किया जा सकता है। इसके लिए लोभ को खत्म करना होगा। लोभ ही संपूर्ण बीमारियों का प्रमुख कारण है। वे लिखते हैं कि ''विश्व में सभी की जरूरत को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन है पर एक भी व्यक्ति के लोभ को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है'' (गां. वा. खण्ड-1, पृ.150)।

गांधी पारितंत्र की रक्षा एवं वास्तविक मानव विकास के लिए ग्रामस्वराज्य की स्थापना का विचार दिया। उनका मानना था कि प्रत्येक गांव को अपने-आप में आत्मनिर्भर होना चाहिए। गांव अपने आप में सूक्ष्म अर्थतंत्र का केंद्र होगा। वृहद अर्थतंत्र की प्रणाली लागू नही होगी। इसी प्रकार की मानवीय दृष्टिकोण ही पारितंत्र की सच्चे रूप में संरक्षण कर सकता है। उन्होंने अपने ग्राम स्वराज्यके प्रारूप में नीचे से ऊपर के तरफ विकास की बात की थी। उनका मानना था कि प्रत्येक ग्राम को आत्मनिर्भर होना होगा। यदि वे अपने आप में शक्तिशाली होगे तो वे शहर से मोलभाव करने में सक्षम होगे। यह इसलिए आवश्यक है कि चीजे नीचे से ऊपर के तरफ चले यही अच्छा होगा'' (विलिमोरिया: 2004, पृ.163)। इस तरह से अध्यात्म, नैतिकता एवं पारितंत्र के मध्य गहरा संबंध है जो आत्मसाक्षात्कार में मदद कर सकता है।

सारांश

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर स्पष्ट होता है कि गांधी के पारितंत्र मनोवैज्ञानिक विचार अध्यात्मिक नैतिकता से ओत-प्रोत थे। वे मानते थे कि मनुष्य को सोचना चाहिए कि वह प्रकृति का ही हिस्सा है इससे पृथक नहीं। पृथ्वी पर जो कुछ भी विद्यमान है वह मानवीय जरूरतों को पूरा करने के लिए है मानवीय लोभ को पूरा करने के लिए नहीं। मनुष्य को सिर्फ आपस में ही नहीं बल्कि अन्य जीवित जीवों के प्रति किसी भी प्रकार का हिंसा नहीं करना चाहिए। इस तरह देखा जाए तो ''गांधी अन्य गहन पारितंत्रविदों के तुलना में ज्यादा बड़े गहन पारितंत्र विद् लगते है'' (जैकोबसन : 2005, पृ. 1150)। आज के औद्योगिक, नगरीकृत, उपभोगतावादी कृतिम समाज में गांधी इसलिए प्रासंगिक हो जाते हैं कि जिस प्रकार पर्यावरण संकट बढ़ रहा

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

है उससे निपटने का बेहतर मार्ग गांधी दृष्टि में ही दिख पड़ती है। सत्य एवं अहिंसा की गांधीवादी अवधारणा ही वह सार्वभौमिक साधन है जो पारितंत्र असंतुलन की दृष्टि को बेहतर बना सकती है।

संदर्भ सूची

M.K. Gandhi from yevada mandir (Ahmedabad : Navjivan, 2007) P. 35.

R. K. Prabhu and V. R. Rao (ed) the mind of mahatma Gandhi (Ahmedabad : Navjivan, 1996)

The Voice of the earth : A Exploration of Ecoprychology (2001) : Raszak Theodore Phanes Press. New York.

M. K. Gandhi 1927, An Autobiography or the Story of my Experiments with truth. Ahmadabad : Navjivan Publishing House.

M. K. Gandhi 1927, M. K. Gandhi Interprets the Bhagavad Gita. New Delhi : Orient-Vision.

M. K. Gandhi 1928, Satygraha in South Africa. Ahmadabad : Navjivan Publishing House.

M. K. Gandhi 1958-1984, The Collected Works of Mahatma Gandhi, 100 Vols. New Delhi : Publication Division, Ministry of Information and Broadcasting, Govt. of India. Referred in the essay as: W/MG. vol. p.

M. K. Gandhi 1959, My Socialism (Compiled by R. K. Prabhu). Ahmadabad : Navjivan Publishing House.

M. K. Gandhi 1990 (1909) Hind Swaraj and othe Writings. Ed. A. J. Parel. Combridge : Combridge University Press.

Adams, Ian and Dyson, R. W. (eds.) 2003 Mohandas Gandhi in. Fifty major Political Thinkers, 196$199. Routledge key Guides scies. Landon & New York : Routledge.

Bilimoria Purushottama 2004, mahatma Gandhi 1869-1948. In Joy A Palmer, ed. Fifty key Thinkers on the Environment, 160-167. London : Routledge.

Dwivedi. O. P. 1990 Satyagraha for conservation : awakening the spirit of Hinduism. In J. R. Engel and J. G. Engel (eds.) Ethics of Environment and Development, 201-212. Tucson : University of Arizona Press.

Jacobsen Knut A. 2005, Arne Naess. In Bron Taylor (ed.) The Encyclopedia of Religion and Nature 1149-1150. New York. Continuum Press.

Khoshoo, Triloki Natha 1997, Gandhian Environmentalism : An Unfinished Task. IASSI Quarterly, 16 (1). July-Sept. Web : http://www.mkgandhi.org/articles_task.htm.

Mathur, J. S. and Mathur A. S. (eds.) 1962. Economic Thought of Mahatma Gandhi Allahabad : Chaitanya Publishing House.

Mc Daniet, Jay 2007. "Ecotheology and World Religions." In Laurel Keams and Catherine Keller (eds.) Ecospirit : Religions and Philosophies for the Earth, 21-44 and notes 546-547. New York : Fordham University Press.

Naess. Arne 1965. Gandhi and the Nuclear Age. Totowa. N. J. Bedminister Press.

Naess. Arne 1989. Ecology, Community and Lifestyle : outline of on Ecosophy. (Trans. David Rothenberg). Combridge : Combridge University Press.

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language